RESEARCH REVIEW JOURNALS
Volume-04
Issue-03
March -2019

ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com [UGC Listed Journal]

# गुणवत्ता शिक्षा की अवधारणा एवं उसकी चुनौतियों का शिक्षा के अधिकार के पृष्ठभूमि में विश्लेषण

[1]परमजीत कौर; [2]डॉ. रामजी दूबे

*[1]शोध छात्रा, पीएच.डी.ए मेवाड़ विश्वविद्यालय, चित्तौड़गढ़, राजस्थान*
*[2]एम.ए., पीएच.डी.ए एसोसिएट प्रोफेसर, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली*

भारत में शिक्षा के अधिकार की संकल्पना और गुणवत्ता शिक्षा की संकल्पना, दोनों की अवधारणा का मूल स्रोत एक ही है, और वह हमारे संविधान में विहित वह प्रावधान जो प्रत्येक व्यक्ति को स्वतंत्रता, समानता और सामाजिक न्याय दिलाने की प्रतिबद्धता को रेखांकित करता है। एक लम्बे अन्तराल के बाद शिक्षा को भारतीय संविधान के तीसरे अध्याय के अनुच्छेद 21A के रूप में संविधान संशोधन के माध्यम से लाया गया। इसके पहले इसे चौथे अध्याय में राज्य के नीति निदेशक तत्वों के अन्तर्गत अनुच्छेद 45 के रूप में रखा गया था। संविधान निर्माताओं ने इस पवित्र कार्य को करने में अपनी असमर्थता जताते हुए इसे राज्य की नैतिक जिम्मेदारी के रूप में डाल दिया था जिसके प्रति कोई कानूनी जिम्मेदारी नहीं होती यानी यह न्यायसंगत की श्रेणी में नहीं रखा गया। इसका सीधा अर्थ होता है कि यदि राज्य खंड चार में विहित किसी कार्य का या नीति को लागू नहीं करता है तो कोई उसके विरुद्ध न्यायालय का दरवाजा नहीं खटका सकता जबकि अध्याय तीन अर्थात् मौलिक अधिकार को यह सुविधा प्राप्त है। संविधान सभा में इसको लेकर लंबी बहस हुई और अन्ततः शिक्षा के अधिकार को मौलिक अधिकार नहीं माना गया। कालक्रम में भारतीय शिक्षा व्यवस्था को इसका बहुत बड़ा खामियाजा भुगतना पड़ा। गुणात्मक और परिमाणात्मक दोनों दृष्टि से हानि हुई। लोक कल्याणकारी राज्य की संकल्पना धीरे–धीरे तिरोहित होती गयी और सामाजिक न्याय की संकल्पना करीब–करीब लुप्तप्राय हो गई। पर बुद्धिजीवी वर्ग अपने लेखों और विद्वत् परिषद् की चर्चाओं के माध्यम से सरकार को जरूर यह चेतावनी देता रहा कि राज्य अपने इस महान कार्य यानी शिक्षा को 6 से 14 साल के छात्रों को निःशुल्क और सार्वभौमिक नहीं कर रहा है और यह एक गैर जिम्मेदाराना व्यवहार है खासकर समाज के दलित और वंचित वर्ग के प्रति। अंततः एक समय आया जब इसके लिए भारत के सर्वोच्च न्यायालय को मोहिनी जैन केस में टिप्पणी करनी पड़ी और नैतिक दबाव में कहें या अन्तर्रात्मा की जागृति की श्रेणी में रखे पर शिक्षा को मौलिक अधिकार बना दिया गया और इस प्रकार लम्बी जद्दोजहद के बाद राज्य ने अपने एक वचन को पूर्ण किया। पर अभी इसकी चुनौतियाँ बाकी हैं जिस पर विचार करना आवश्यक है।

मौलिक अधिकार की श्रेणी में शिक्षा को रख तो दिया गया है लेकिन अभी इसको अमली जामा पहनाने में बहुत ही अड़चने हैं जिससे निपटना बाकी है। संवैधानिक दायित्व से पिंड छुड़ाना अलग बात है और उसका नैतिक रूप से समर्पण के साथ निर्वहन करना दूसरी बात है। दुर्भाग्य से आज शिक्षकों और शिक्षण में लगे अन्य लोगों को एक बड़ी जिम्मेदारी मिल तो गयी पर इसके मार्ग में बहुत सारी बाधाएँ है जिनका निवारण राज्य के हाथ में है और उसका निस्तरण भी जल्द से जल्द होना आवश्यक है। इस संदर्भ में कुछ बुनियादी सवाल हैं जिनका जवाब ढूँढ़ना सरकार की जिम्मेदारी है। उनमें सबसे बड़ा सवाल है भौतिक संसाधन और मानवीय संसाधन की आपूर्ति यानी विद्यालयों एवं अध्यापकों की संख्या एवं गुणवत्ता दोनों में वृद्धि करना। सबसे पहले हमें देखना होगा कि क्या शिक्षा के अधिकार को मौलिक अधिकार बनाने के बाद जितने विद्यालयों की आवश्यकता थी उनका निर्माण हो पाया है या नहीं? इसी से जुड़ा दूसरा सवाल यह है कि उस मात्रा में शिक्षकों की भर्त्ती हो पायी है या नहीं? इन दोनों बुनियादी सवालों का उत्तर 'नहीं' में आ रहा है। अब अगला सवाल है कि फिर गुणवत्ता शिक्षा की अवधारणा का क्या होगा? मैं इस लेख में इन्हीं तीन सवालों को रेखांकित करने का प्रयास करूंगी।

गुणवत्ता शिक्षा की अवधारणा क्या है इसको स्पष्ट करना आवश्यक है। एक स्कूल अध्यापिका के रूप में मेरे अनुभव एवं पुस्तकों में छपे ज्ञान बिंदुओं को जब एकत्र करके इसका विश्लेषण किया जाए तो गुणवत्ता शिक्षा को निम्नलिखित रूप में देखा और समझा जा सकता है –

1. योग्य एवं समर्पित अध्यापकों की उपलब्धता।
2. सभी छात्रों के लिये गुणवत्तापूर्ण पाठ्यपुस्तकों की उपलब्धता।
3. अच्छे विद्यालय भवन एवं अध्ययन उपकरणों की उपलब्धता।
4. छात्र/छात्राओं का कम से कम चार से पाँच घंटे तक सार्थक रूप से विद्यालय में रूकने की व्यवस्था।
5. अध्यापकों के लिये कार्य संस्कृति–समृद्ध करने हेतु उनके अध्यापक बनने से पूर्व का प्रशिक्षण (प्रि–सर्विस ट्रेनिंग) और अध्यापक बनने के बाद उनके ज्ञान संवर्धन एवं कौशल संवर्धन के लिये प्रशिक्षण की

RRIJM 2015, All Rights Reserved

समुचित व्यवस्था (इन–सर्विस ट्रेनिंग)।

6. अध्यापन विधियों को वर्तमान समय के अनुरूप ढालने की पूरी व्यवस्था करना।
7. बस्ते के बोझ से निपटने की पूर्ण व्यवस्था करना।
8. बच्चे की शिक्षा उसकी मातृभाषा में होना।
9. तनावमुक्त परीक्षा एवं मूल्यांकन की व्यवस्था।

उपरोक्त कुछ बिन्दु है जिनकी तरफ मैंने संकेत किये हैं अब इस संदर्भ में जो शिक्षा के अधिकार के आने के बाद की जमीनी सच्चाई है उसको जानना बहुत आवश्यक है अन्यथा इस लेख का उद्देश्य सार्थक नहीं होगा।

वास्तव में ऊपर के सारे बिन्दु सवाल बनकर आज भी मुँह बाए अपने उत्तर की प्रतिक्षा में खड़े हैं और उनका उत्तर नहीं दिया जा रहा है और यदि दिया भी जा रहा है तो केवल अपनी खाल बचाने के लिये कुछ कागजी कार्यवाही कर के इतिश्री मान लिया जाता है। शिक्षा पर 6 प्रतिशत खर्च करने की बात आज भी जबानी खाते में चल रही है। इसको आज तक कार्यान्वित नहीं किया जा सका। शिक्षकों की भर्त्ती और पदस्थापना की समस्या सारा राष्ट्र झेल रहा है। इस बीच हमने इस समस्या से निपटने के लिय शिक्षा मित्र नामक एक और संकल्पना गढ़ ली है जो कोढ़ में खाज की तरह कार्यरत है। उनकी नियुक्ति के कारण दो प्रकार की नई समस्याएँ आयी हैं। पहली तो यह कि जो स्थायी शिक्षक है वे चक्रवर्ती राजा की तरह हो गये हैं। उनका बोझ बहुत कम हो गया है दूसरा यह कि शिक्षा मित्रों को चूँकि कोई विशेष प्रशिक्षण प्राप्त नहीं होता और यदि है भी तो उनकी जिम्मेदारी न छात्रों के प्रति है न विद्यालय के प्रति। वे तो उस प्रधान या मुखिया या प्रधानाचार्य के प्रति जिम्मेदार हैं जिसने उनकी भर्त्ती की है या फिर उस मुख्यमंत्री के प्रति जिसने उनकी राजनीतिक भर्त्ती की है। उत्तर प्रदेश और बिहार जैसे प्रांत में इसका माखौल ज्यादा ही उड़ाया जा रहा है। वे न तो समय से विद्यालय आते हैं और न कार्य के प्रति उनके मन में कोई समर्पण भाव है। उनके देखा–देखी जो स्थायी शिक्षक हैं उन पर भी नकारात्मक प्रभाव पड़ने लगा है जिससे जिस गुणवत्ता शिक्षा की चर्चा हो रही है वह दूर–दूर तक कहीं नहीं दिखती। जहाँ अध्यापक ही विद्यालय में टिक कर राज़ी नहीं है वहाँ बच्चे कहाँ टिकेंगे। वे तो मिड–डे–मिल के लिये आते हैं और उसे खाकर या घर लेकर चले जाते है। उसकी गुणवत्ता पर कोई नियंत्रण नहीं है। खिचड़ी नामक भोजन प्रतिदिन परोसा जाता है और सरकार और विद्यालय दोनों ही इसके साथ सामंजस्य बैठाकर चलते है क्योंकि वहाँ पर 'विद्या धनम् सर्व धनम् प्रधानम्' की व्याख्या यह की जाती है की शिक्षा यानी विद्या के लिये आया हुआ सारा धन–प्रधान के लिये है। यह हास्य–व्यंग्य के किसी रचनाकार ने सोशल मीडिया में भेजा था जो आज इस राष्ट्र का सबसे बड़ा सच है।

अब जिन बिन्दुओं की गुणवत्ता शिक्षा के बिन्दु को रूप में ऊपर रेखांकित किया गया है वे करीब–करीब वे ही बिन्दु है जिनको सभी आयोगों ने प्रावधान के रूप में लाने की अनुशंसा की है। कोठारी कमीशन से लेकर शिक्षा नीति 2009 तक यदि हम उस पर दृष्टिपात करें तो ये सर्वत्र उसी रूप में रेखांकित किये गये है पर जमीन पर उसकी सच्चाई क्या है यह सर्वविदित है। इस बीच एक और महान विपदा आन पड़ी है जिसने गुणवत्ता शिक्षा को बहुत अनिष्ट किया है और वह है 'नो डिटेंशन' की नीति।

इस लेख में गुणवत्ता शिक्षा के शत्रु के रूप में जो बिन्दु उभरकर आये हैं उसमें 'नो डिटेंशन' की सबसे अहम भूमिका है। इस नीति के तहत जो बातें रखी गयी है उसमें बच्चा/छात्र को असफल होने का भय नही हैं, कक्षा में शारीरिक दंड का कोई भय नहीं, गृहकार्य करने का कोई भय नहीं है, पंजिका से नाम कटने का भय नहीं है और साथ ही बोर्ड की परीक्षा का भय भी हटा दिया गया था।

इसमें कुछ आँकड़े और हैं जो सरकारी दस्तावेजों से लिये गये हैं जिनके आधार पर हम यह कह सकते है कि भारतीय शिक्षा व्यवस्था में शिक्षा के अधिकार को मौलिक अधिकार घोषित होने के बावजूद भी गुणवत्ता की हालत आज भी चिन्ता और चिन्तन का विषय है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति के विकास के लिये जो समिति बनायी गयी थी उसने अपने रिपोर्ट पृष्ठ 66–67 (6.24) में शिक्षकों से जुड़े कुछ आँकड़े प्रस्तुत किये है जो इस बात का संकेत देते है कि गुणवत्ता की बात करने वाली शिक्षा नीति में किस प्रकार अभी भी न्यूनता विद्यमान हैं –

- पाँच लाख शिक्षकों की कमी प्रारंभिक स्तर पर।
- शिक्षकों की अनुपस्थिति विद्यालय में।
- 14 प्रतिशत शिक्षकों के रिक्त पद माध्यमिक स्कूलों में।
- शिक्षकों की भर्त्ती एवं स्थानान्तरण।
- शिक्षकों के सेवा शर्तों से जुड़े कोर्ट केस।
- विद्यालय नेतृत्व मुख्याध्यापक/प्रधानाचार्य की भूमिका।
- शिक्षक–शिक्षा प्रशिक्षण।

ऊपरलिखित दस्तावेजी आँकड़े जो संकेत दे रहे है वे अपने आप में सरकारी नीतियों एवं उनके कार्यान्वयन की सम्पूर्ण तस्वीर प्रस्तुत करने के लिये पर्याप्त हैं और स्वयं सरकार की पोल खोल रहे हैं लेकिन जमीनी सच्चाई इन आँकड़ों से भी आगे हैं। केन्द्र और राज्य दोनों की स्थिति को अलग–अलग देखें तो तस्वीर और साफ हो जायेगी जिसके लिये मैं केवल राष्ट्र की राजधानी को ही उदाहरण के लिये लेना चाहूँगी। प्राथमिक शिक्षा और माध्यमिक शिक्षा दोनों की तस्वीर यहाँ प्रस्तुत करना आवश्यक है। दिल्ली के प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षकों की तनख्वाह कुछ महीने से नहीं मिली है। इसके अतिरिक्त अध्यापन के अतिरिक्त सारे कार्य करने को दिया जाता है। दूसरी तरफ माध्यमिक शिक्षा की हालत भी

इससे अच्छी नहीं है। वहाँ भी अधिकांश छात्र–छात्राओं का विद्यालय में आगमन या तो मध्यान्ह भोजन के लिए होता है या छात्रवृत्ति और अन्य सुविधाओं के लिए। अध्ययन–अध्यापन का प्रश्न वहाँ भी गौण है। अब ऐसी स्थिति में गुणवत्ता शिक्षा की चर्चा करना बिल्कुल बेमानी–सा लगता है। देश के दूर–दराज के प्राथमिक विद्यालयों और माध्यमिक विद्यालयों की हालत क्या होगी इसकी कल्पना आप राष्ट्र की राजधानी को देखकर लगा सकते हैं। वहाँ तो गाँवों में मुखिया और सरपंच अपने लोगों को अध्यापक के रूप में भर्त्ती कराने की जुगत में रहते हैं और प्रधानाचार्य से मिलकर मध्यान्ह भोजन के लिए आयी हुई राशि को ठिकाने लगाते हैं। विद्यालय की मरम्मत और निर्माण के लिये जो सरकारी धन आवंटित किया जाता है वह प्रधानाचार्य की सहायता से प्रधान ठिकाने लगाते हैं और जिसमें वहाँ के अधिकारियों का हिस्सा निश्चित होता है। यह है कि इस स्वतंत्र भारत की गुणवत्ता शिक्षा। छात्र वैसे तो विद्यालय केवल मध्यान्ह भोजन के निमित्त आते हैं पर जब छात्रवृत्ति की राशि आती है तो अभिभावक भी उपस्थित हो जाते हैं।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि सरकारी दस्तावेज और विद्यालयों की जमीनी सच्चाई दोनों इस बात के साक्षी हैं कि गुणवत्ता शिक्षा की संकल्पना अभी आकाश कुसुम है और इसे धरती पर उतारने में अभी कितना समय लगेगा इसका आकलन करना संभव नहीं लगता। शिक्षा की संकल्पना अब भी साक्षरता के इर्द–गिर्द घूम रही है और शिक्षा की गुणवत्ता वास्तव में अभी दूर की कौड़ी है जिसको छानकर निकालने के लिये कितना भी बड़ा जाल बिछाया जाए वह लालफीताशाही और भ्रष्ट तंत्र के जाल में उलझकर रह जाती है।

अतः यह कहा जा सकता है कि यदि शिक्षा को गुणवत्तापूर्ण बनाना है तो इससे संबंधित बुनियादी सवालों को हल करना होगा यथा, मातृभाषा में शिक्षा, योग्य एवं समर्पित अध्यापकों की भर्त्ती, विद्यालय परिसर की गुणवत्ता, गुणवत्तापूर्ण पाठ्यपुस्तक की उपलब्धता एवं शिक्षा को वंचित लोगों तक पहुँचाने का प्रयास करना।

## संदर्भ ग्रंथ सूची


1. सद्गोपाल, अनिल (2011–12), संसद में शिक्षा का अधिकार छीननेवाला बिल, किशोर भारती, मध्य प्रदेश।
2. मेयर्स.जी. राबर्ट : बच्चों के लिए एक सही शुरूआत यूनेस्को एवं नेशनल बुक ट्रस्ट, इन्डिया, संस्करण–1994.
3. रामपाल, चमनलाल : विश्व गुरु भारत, चमन प्रकाशन, 46, अरविन्दो मार्ग, देहरादून–संस्करण 2015.
4. बत्रा, दीनानाथ : शिक्षा में त्रिवेणी, विद्याभारती प्रकाशन, संस्कृति भवन, कुरूक्षेत्र, हरियाणा, प्रथम संस्करण–वर्ष प्रतिपदा–युगाब्द 1502 वि.सं. 2056.
5. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 संशोधित प्रारूप–1990, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, नई दिल्ली
6. दूबे; राम जी : शिक्षा का अधिकार शक्ति पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, दिल्ली (2011)
7. रायजादा, बी.एस. : शिक्षा में अनुसंधान के आवश्यक तत्व, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर (1997)


RRIJM 2015, All Rights Reserved 